है वहाँ रात भी होगी और प्रात: के साथ सांझ भी निश्चित है । ऐसे में भाषायी सार्थकता व पूर्णता हेतु -विलोम' शब्दों का होना भी आवश्यक है ।

7.9 अर्थ परिवर्तन के कारण एवं दिशाएं

भाषा परिवर्तन शील है । ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य के स्तर पर परिवर्तन की चर्चा विस्तार से हो चुकी है , अब अर्थ परिवर्तन की बारी है । अर्थ परिवर्तन को अर्थ विकास भी कहा जाता है । वैसे भाषा में किसी भी अंग का परिवर्तन क्यों न हो, वह एक प्रकार से विकास का सूचक होता है । भाषा में व्याकरण जिसे अशुद्ध कह कर त्यागने की बात करता है, वहीं भाषा विज्ञान उसे परिवर्तन- विकास व प्रगति का सूचक कह कर स्वीकार करता है । इस प्रकार समय के साथ-साथ जिस प्रकार से शब्द, पद, वाक्य में परिवर्तन हुआ त्यों-त्यों 'अर्थ' में भी परिवर्तन होता गया है । कुछ शब्दों में अर्थ विस्तार हुआ है तो कई शब्दों का अर्थ संकुचित, कई शब्दों के अर्थ का उत्कर्ष हुआ तो कइयों के अर्थ का अपकर्ष । इस प्रकार हम सबसे पहले अर्थ परिवर्तन की दिशाओं पर चर्चा करें तो 'अर्थ परिवर्तन के कारणों की स्थिति स्पष्ट हो पाएगी -

7.9.1 अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ

अर्थ परिवर्तन की मुख्य तीन दिशाएँ मानी जाती हैं -

क. अर्थ विस्तार Expansion of Meaning) :- वह शब्द जो पहले किसी एक अर्थ का वाचक हो तथा बाद में उसका अर्थ विस्तार अन्य वस्तुओं तक हो जाए उसे अर्थ विस्तार कहा जाता है जैसे - प्राचीन काल के संस्कृत साहित्य में 'कुशल' शब्द का अर्थ था - कुश लाने में प्रवीण या चतुर', क्योंकि 'कुश' एक प्रकार की नुकीली नोक वाला घास था जिसे बड़ी सावधानी से उखाड़ना पड़ता था, असावधानी से हाथ अथवा उंगली में उसकी नोक गड़ जाती थी । इस प्रकार वहाँ 'कुश' लाने वाले के अर्थ में कुशल का प्रयोग होता था, लेकिन आज किसी भी कार्य को भली-भाँति करने वाले के लिए 'कुशल' शब्द का प्रयोग होने लगा है । पहले 'प्रवीण' का अर्थ केवल 'अच्छी तरह वीणा बजाने वाला' होता था ।' आजकल 'जूते गाँठने में प्रवीण, घड़े बनाने में प्रवीण, कलम गढने में प्रवीण पुस्तकें चुराने में प्रवीण और 'माम चन्द का लड़का 'प्रवीण' कहलाते हैं, हाँलाकि इन्होंने वीणा कभी देखी भी नहीं है । इसी प्रकार पहले 'अभ्यास' का अर्थ था 'बार-बार बाण फेंकना, परन्तु आज तो प्रत्येक काम के लिए अभ्यास शब्द का प्रयोग होने लग गया - वह लिखने का अभ्यास कर रहा है, इसे ऊँची कूद का अभ्यास नहीं है, क्रिकेट में हर रोज अभ्यास की आवश्यकता है, दूध निकालने में भी अभ्यास चाहिए, आदि

सिलाई कढ़ाई बुनाई, में अभ्यास तो 'टाईप, 'कम्प्यूटर' चलाने के लिए 'अभ्यास' काम करता है । पहले 'तेल' का अर्थ था 'तिल का सार या तेल' लेकिन आज अर्थ

विस्तार होकर चमेली, अरण्डी, सोयाबीन, मूंगफली, बादाम, सरसों, आँवला, नारियल का तेल- के लिए शब्द का प्रयोग हो रहा है । आरम्भ में 'स्याह' का अर्थ था 'काला' लोग स्याह रंग से लिखते थे और उसका अर्थ था 'स्याही' परन्तु आज अर्थ विस्तार होकर नीली, पीली, लाल, काली' सभी प्रकार की लिखने की स्याही का अर्थ प्रकट करने लगा है 'स्याही' शब्द । पहले सब्जी' शब्द जिसमें सब्ज का अर्थ 'हरा' होता था और सब्जी का अर्थ केवल 'हरी सब्जी' था लेकिन आज -गोभी, केला, टिण्डा, अरबी, आलू ,राजमा, चणे की सब्जी (छोले) के लिए यह शब्द प्रयुक्त हो रहा है ।

ख. अर्थ संकोच (Contraction of Meaning) :- जहाँ शब्द के विस्तृत अर्थ की परम्परा समाप्त होकर केवल उसका संकुचितं अर्थ बना रह जाए वहाँ अर्थ संकोच होता है । प्राचीन काल में जंगल में रहने वाले अर्थात् शिकार योग्य हरेक पशु को 'मृग' कहा जाता था, परन्तु वर्तमान में इसका अर्थ संकुचित होकर 'केवल' हरिण के लिए रह गया। 'गो' शब्द की व्युत्पत्ति' गम धातु से हुई है । जिसका अर्थ है ' गमन करने वाला' अर्थात् चलने वाला । लेकिन आज सभी चलने वाले पशुओं को 'गो' न कह कर इससे केवल 'गाय' का अर्थ प्रकट होने लगा है । पहले वह प्रत्येक कार्य जो श्रद्धा पूर्वक किया जाता था, ऐसे सभी कार्यों को 'श्राद्ध' कहा जाता था, लेकिन आज इसका अर्थ संकोच होकर केवल मृत्यु के बाद ही श्राद्ध, का प्रयोग होने लगा है । 'पय' शब्द का अर्थ प्राचीन संस्कृत में 'दूध' तथा 'पानी' दोनों के लिए प्रयुक्त होता था, जो आज केवल 'दूध' का अर्थ देता है । 'सर्प' रेंग कर चलने वाले प्रत्येक जीव का बोधक था ' लेकिन आज केवल' साँप' का अर्थ देता है । 'पर्वत' अर्थात्' पर्वो (पोरों) वाला, इसीलिए प्राचीन संस्कृत में इसका अर्थ 'नरकुल, सरकंडा, गन्ना, बाँस' भी होता था, लेकिन आज अर्थ संकुचित होकर केवल 'पर्वत' रह गया । इस प्रकार अर्थ संकोच के अन्य कारणों में -'समास, उपसर्ग, विशेषण, पारिभाषिकता, नामकरण, प्रत्यय आदि की विशेष भूमिका होती है । जैसे इन समस्तपदों :- ''पीताम्बर, नीलाम्बर, दशानन आदि का अर्थ संकुचित होकर एक व्यक्ति विशेष श्री कृष्ण, बलराम व रावण' के लिए ही प्रयुक्त होता है, न कि हर उस व्यक्ति को पीताम्बर कह दिया जाए जो पीले वस्त्र पहनता है । हर लम्बे पेट वाले को 'लम्बोदर' नहीं कहा जा सकता । अब इसका अर्थ संकुचित व रूढ़ होकर समस्तपद के सहारे 'श्री गणेश' का ही वाचक है किसी अन्य 'पेटू' का नहीं । इसी प्रकार यदि लाल गुलाब कहा जाता है तो वह केवल लाल विशेषण से बंधकर मात्र एक ही प्रकार के 'लाल गुलाब' फूल का अर्थ देता है, वरना तो गुलाब के फूल कई प्रकार के रंगों के होते हैं । यदि 'हार' शब्द में उपसर्ग 'प्र' लगा दिया जाए तो 'हार' प्रत्येक खेल में, युद्ध में या कार्य से होने वाली 'हार' का अर्थ न देकर 'प्रहार' एक प्रकार से आक्रमण करना या चोट पहुँचाना' के अर्थ तक संकुचित होकर रह गया । इसी प्रकार 'चार' शब्द में

विभिन्न उपसर्गों का योग कर दिया जाए तो 'संचार, उपचार, व्यभिचार, विचार, प्रचार' आदि पद बन जाएंगे और अर्थ भी अलग-अलग हो जाएगा। पारिभाषिक दृष्टि से देखें तो 'रस' का प्रयोग कई अर्थों में हो सकता है, गन्ने का रस, आँवले का रस, मौसमी का रस, आदि लेकिन औषधि विज्ञान में किसी जड़ी-बूटी का 'रस' ही होगा, साहित्य में विभावादि के संयोग से उत्पन्न आनन्दानुभूति 'काव्य' रस रूप में आएगा। 'व्याकरण में ' परस्पर दो शब्दों के मेल से पहले शब्द की 'अन्तिम' तथा 'बाद' के शब्द की प्रथम ध्वनि के मेल से जो ध्वनि परिवर्तन होगा उसे सन्धि कहेंगे, जबकि राजनीति' में दो देशों के झगड़े या अन्य समस्या के समाधान हेतु 'सन्धि' होती है । इसी प्रकार गृहस्थी, वानप्रस्थ, आदि शब्दों का अर्थ भी संकुचित होगया है क्योंकि. घर में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को- गृहस्थ' नहीं कंहा जा सकता, उसी प्रकार- वन में रहने वाले सभी मनुष्यों को 'वानप्रस्थ' नहीं कहा जा सकता, ये तो अपना संकुचित विशिष्ट अर्थ ही प्रकट करेंगे।

ग. अर्थादेश (Transference of meaning) :- डॉ. भोला नाथ तिवारी के अनुसार ''भाव-साहचर्य के कारण कभी-कभी शब्द के प्रधान अर्थ के साथ एक गौण अर्थ भी चलने लगता है । कुछ दिन में ऐसा होता है कि प्रधान अर्थ का धीरे-धीरे लोप हो जाता है और गौण अर्थ में ही शब्द प्रयुक्त होने लगता है । इस प्रकार एक अर्थ के लोप होने तथा नवीन अर्थ के आ जाने को 'अर्थादेश' कहते हैं ।'' कहने का तात्पर्य यह है कि अर्थोदेश में किसी शब्द के अर्थ का विस्तार या संकुचन नहीं होता बल्कि अर्थ पूर्णतः बदल जाता है । जैसे 'गँवार' शब्द का पहले अर्थ होता था 'गाँव मे रहने वाला' लेकिन वर्तमान में यह 'असभ्य अर्थ' का वाचक हो गया है । वेद ग्रन्थों में 'असुर' 'शब्द' 'देवता' का अर्थ देता था लेकिन अब यह पूर्णतः बदल कर 'राक्षस' का अर्थ देता है ' इसका पूर्व अर्थ 'देवता' पता नहीं कहाँ लुप्त हो गया । इस प्रकार अर्थादेश के अन्तर्गत 'अर्थ परिवर्तन दो दिशाओं में होता है । क. अर्थोत्कर्ष, ख. अर्थापकर्ष ।

क. अर्थोत्कर्ष :- इस परिवर्तन के अंतर्गत किसी शब्द का पूर्व अर्थ अच्छा नहीं होता, हीन होता है, लेकिन परिवर्तित अर्थ पहले के अर्थ से श्रेष्ठ होता है । जैसे पहले सस्कृत में 'साहस, अदम्य साहस' आदि शब्दों के अर्थ - क्रुर, नृशंस, व्यभिचार, हत्या, डाका आदि हुआ करता था, लेकिन आज 'साहस' का अर्थ अच्छा होकर हिम्मत के साथ किए जाने वाले कार्यों के संदर्भ में होनें लगा है उसमें साहस है इसलिए रात को जंगल में चला जाएगा, साहसी बच्चे सफल ही होते हैं, महिला ने बड़े साहस से काम लिया व चोर को मार भगा दिया, राष्ट्रपति ने गणतन्त्र दिवस पर साहसी बच्चों को पारितोषिक प्रदान किए' आदि वाक्यों में 'साहस' शब्द अपने बुरे अर्थ को छोड़ अच्छे अर्थ को ग्रहण कर चुका है । यहाँ साहस का अर्थोत्कर्ष हुआ है पहले 'कर्पट' का अर्थ होता था 'चीथड़ा, जीर्णशीर्ण वस्त्र, लेकिन अब अर्थोत्कर्ष के साथ यह हर प्रकार के कपड़े के अर्थ का बोध

करवाने लगा है । 'मुग्ध' शब्द का संस्कृत में अर्थ था 'मुर्ख' लेकिन आज उसमें मुखता का कोई चिह्न दिखाई नहीं देता । हर कोई कहता है कि नायक-नायिका को देखकर मुग्ध हो गया, जनता आशा राम बापू का प्रवचन मंत्रमुग्ध होकर सुन रही थी अर्थात्, अब इसका अर्थ 'मूढ' न होकर 'मोहित' हो गया है जो अच्छा है ।

ख. अर्थापकर्ष :- जहाँ शब्द अपने पहले के अच्छे, श्रेष्ठ अर्थ का लोप कर निकृष्ट अर्थ, हीन अर्थ का वाचक हो जाए उसे अर्थापकर्ष कहते हैं । जैसे 'गँवार' शब्द का अर्थ 'पहले' गाँव में रहने वाला होता था, लेकिन अब अर्थापकर्ष होकर इसका अर्थ 'असभ्य' हो गया है । 'जुगुप्सा' शब्द 'गुप', धातु से निर्मित है, जिसका पहले 'छिपाने या पालने के' अर्थ में प्रयोग होता था, लेकिन अब इसका अर्थापकर्ष होकर अर्थ हो गया 'घृणा' । यहाँ इसका अर्थ 'पालन' से गिरकर 'घृणा' अर्थ में प्रयुक्त होना 'जुगुसा' का अर्थापकर्ष ही है । 'नग्न', व 'लुंचित' ये दोनों शब्द पहले जैन धर्म में साधुओं के लिए बहुत सम्मान के साथ प्रयुक्त होते थे; लेकिन अब इनका तद्भव रूप 'नंगा', लुच्चा, बदमाश' के लिए प्रयुक्त होता है । इसी प्रकार 'लिंग' का पहले अर्थ था 'लक्षण' लेकिन वर्तमान में आमबोल चाल में इस शब्द का प्रयोग ही 'अश्लीलता' की कोटि में आता है । पहले 'हरिजन' का अर्थ 'भगवान के भक्तों ' का बोध करवाता था, लेकिन वर्तमान में अर्थापकर्ष ने इसे 'अनुसूचित जातियों के अर्थ 'हरिजन ' का प्रतीक बना छोड़ा । गाँव में विशेषकर हरिजनों के वोट दबाव से डलवाए गए, कांग्रेस हरिजनों के लिए आरक्षण जारी रखेगी । यहाँ अर्थ 'भगवान के भक्तों का आरक्षण' या भगवान के भक्तों के वोट का नहीं है । 'पाषण्ड' शब्द बौद्धकाल में 'सम्मान के पात्र अनुयायियों का सूचक था'। इन्हें सम्राट अशोक दान भी देते थे ; जो आज 'पाखण्ड, पाखण्डी के रूप में प्रयुक्त होने लगा है । इसी प्रकार 'महाजन' श्रेष्ठ व्यक्ति का बौध करवाता था' तो आजकल 'सूदखोर' का अर्थ प्रकट करता है ।

7.9.2 अर्थ परिवर्तन के कारण

अर्थ परिवर्तन व्यक्ति की मानसिक प्रवृत्ति पर निर्भर करता है । समय के साथ-साथ मानव ने अपने भाव-विचार की सार्थकता को बनाए रखने के लिए स्वन, शब्द, पद, वाक्य आदि में परिवर्तन किया है, उसी प्रकार अर्थ परिवर्तन भी व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक परिस्थिति का फल है । अर्थ परिवर्तन में कहीं न कहीं लाक्षणिकता अवश्य कार्य करती है । व्यक्ति की मनोवृत्ति रही है कि वह कुछ नवीनता से बोले, शब्दों का प्रयोग नए ढंग से करे, नयी भाव-भंगिमा से मनोभावों को व्यक्त करे । ऐसा करने में वह कभी सुर बदलता है, कभी 'काकु' का सहारा लेता है, कभी परम्परा का पालन करता है तो कभी शब्दों की आवृति का सहारा लेता है । इस प्रकार अर्थ परिवर्तन होता रहा है।